जैन आगमों में वर्णित

ध्यान-साधिकाएँ

—डॉ० शान्ता भानावत

[प्रिन्सीपल, श्री वीर बालिका महाविद्यालय, जयपुर।

जैन धर्म एवं दर्शन की विदुषी लेखिका]

जैन आगमों में भगवान महावीर का तत्त्व-चिन्तन एवं उसे आत्मसात कर साधना पथ पर बढ़ने वाले श्रमण-श्रमणियों और श्रावक-श्राविकाओं का वर्णन है। ध्यान, मन को इन्द्रिय-विषयों से हटाकर आत्म-स्वरूप की ओर अभिमुख करता है। इससे बाहरी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी बनती हैं। ध्यान आन्तरिक ऊर्जा का स्रोत है। इससे आत्मा निर्मल, शक्तिसम्पन्न और शुद्ध बनती है। जीवन में पवित्रता, विचारों में विशुद्धि और व्यवहार में प्रेम, करुणा, मैत्री व विश्व-वत्सलता का भाव जागृत होता है। कर्म-निर्जरा में ध्यान सहायक होता है। यह आभ्यन्तर तप है। इससे कर्म अर्थात् पाप दग्ध होकर नष्ट हो जाते हैं। कर्मों के नष्ट होने से आत्मा की सुषुप्त शक्तियां जाग उठती हैं। आत्मा परमात्मा बन जाती है। आत्मा के इस चरम आध्यात्मिक विकास में जैन दर्शन में स्त्री और पुरुष में किसी प्रकार का भेद नहीं किया गया है।

मानव सृष्टि के मंगल रथ के दो चक्र हैं—पुरुष और नारी। रथ का एक चक्र दुर्बल अथवा क्षत-विक्षत रहने से जिस प्रकार रथ की गति में अवरोध पैदा हो जाता है, उसी प्रकार मानव सृष्टि का कोई एक चक्र उपेक्षित, दुर्बल व अशक्त रहने से उसकी गति भी लड़खड़ा जाती है। इसलिये भारतीय मनीषियों ने मानव सृष्टि के इन दोनों अंगों को समान महत्व दिया। उपादेयता एवं उपकारिता में कोई भी अंग किसी से कम नहीं है।

वेद, उपनिषद् एवं आगम ग्रन्थों के अनुशीलन से यह बात और स्पष्ट हो जाती है कि नारी भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की आदि शक्ति रही है। मानव सभ्यता के विकास में ही नहीं किन्तु उसके निर्माण में भी नारी का योगदान पुरुष से कई गुना अधिक है। भारतीय नारी का समूचा इतिहास नारी के ज्वलन्त त्याग-प्रेम-निष्ठा-सेवा-तप और आत्मविश्वास के दिव्य आलोक से जगमगा रहा है। आत्मा की दृष्टि से श्रमण संस्कृति ने नारी और पुरुष में कोई तात्त्विक भेद नहीं माना। उसने पुरुषों की भाँति स्त्रियों को भी तमाम अधिकार दिये। आत्म-विकास की श्रेष्ठतम स्थिति मोक्ष है। मोक्ष के द्वार तक पुरुष भी पहुँचा है और नारी भी पहुँची है। श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार सर्वप्रथम मोक्ष जाने वाली (वर्तमान कालचक्र की अपेक्षा) स्त्री ही थी। वह थी भगवान ऋषभदेव की माता मरुदेवी। जिन्होंने हाथी पर बैठे-बैठे ही निर्मोह दशा में कैवल्य प्राप्त कर लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन श्रुतियां इसका साक्ष्य हैं कि प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव से लेकर चरम तीर्थंकर भगवान महावीर के शासन तक में साधुओं की अपेक्षा साध्वियों तथा श्रावकों की अपेक्षा श्राविकाओं की संख्या अधिक रही है। स्त्री स्वभावतः ही धर्मप्रिय, करुणाशील एवं कष्टसहिष्णु होती है। धार्मिक साधना में उसकी रुचि तीव्र होती है। तपस्या एवं कष्टसहिष्णुता में भी वह पुरुष से आगे रहती है। जैन शास्त्रों में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिनमें किसी तीर्थंकर या आचार्य आदि की एक ही देशना से हजारों स्त्रियाँ एक साथ प्रबुद्ध हो उठतीं और वे एक साथ ही अपने समस्त भोग, ऐश्वर्य एवं सुखों का परित्याग कर रमणी से श्रमणी बन जातीं।

अन्तकृत्दशांग सूत्र में वासुदेव श्रीकृष्ण की रानियों की चर्चा आती है, जिन्होंने भगवान अरिष्टनेमि के दर्शन कर धर्मदेशना सुनी और एक प्रवचन से प्रबुद्ध होकर पद्मावती आदि रानियों ने संसार त्याग कर दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षा ग्रहण कर ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। बहुत से उपवास, बेले, तेले, चोले, पचोले, मासखमण आदि विविध तपस्याओं से आत्मा को भावित करते हुए जीवन पर्यन्त चारित्रधर्म का पालन करते हुए संलेखनापूर्वक उपसर्ग सहन करते हुए अन्तिम श्वास से सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुई। इन रानियों में मुख्य हैं—पद्मावती, गौरी, गांधारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती, सत्यभामा, रुक्मिणी आदि।

जैनधर्म-दर्शन में नारी के भोग्या स्वरूप की सर्वत्र भर्त्सना की गई है और साधिका स्वरूप की सर्वत्र वन्दना, स्तवना। "अन्तकृत्शांग" सूत्र में मगध के सम्राट श्रेणिक की काली, सुकाली, महाकाली, कृष्णा, सुकृष्णा, महाकृष्णा, वीरकृष्णा, पितृसेनकृष्णा, और महासेनकृष्णा आदि दस रानियों का वर्णन है। जिन्होंने श्रमण भगवान महावीर के उपदेश से प्रतिबोध पाकर संयम पथ स्वीकार किया। जो महारानियाँ राजप्रासादों में रहकर विभिन्न प्रकार के रत्नों के हार एवं आभूषणों से अपने शरीर को विभूषित करती थीं. वे जब साधनापथ पर बढ़ीं तो कनकावली, रत्नावली आदि विविध प्रकार की तपश्चर्या के हारों को धारण कर अपनी आत्म-ज्योति को चमकाया।

उन्नीसवें तीर्थंकर भगवती मल्लीनाथ का नाम जैन इतिहास में स्वर्णाक्षरों से अंकित हैं। नारी भी आध्यात्मिक विभूतियों एवं ऋद्धि-सिद्धियों की स्वामिनी होकर उसी प्रकार तीर्थंकर पद को प्राप्त कर सकती है जिस प्रकार पुरुष। भगवती मल्ली का जन्म मिथिला के राजा इक्ष्वाकुवंशीय महाराज कुम्भ की महारानी प्रभावती की कुक्षि से हुआ। जन्म से ही विशिष्ट ज्ञान की धारिका होने के कारण इनके पिता ने इनका नाम मल्ली भगवती रखा।

मल्लीकुमारी रूप, गुण, लावण्य में अत्यन्त उत्कृष्ट थीं। इनकी उत्कृष्टता की चर्चा देश-देशान्तरों में फैल चुकी थी। अनेक देशों के बड़े-बड़े महिपाल मल्ली पर मुग्ध हो रहे थे। मल्लीकुमारी की याचना के लिए विभिन्न देशों के राजा-महाराजा कुम्भ के पास अपने-अपने दूत भेज रहे थे। इस घटना से राजा चिन्तित हो रहे थे। मल्लीकुमारी ने अपने पिता की चिन्ता दूर करते हुए विभिन्न देशों के भूपतियों को सम्बोधित करते हुए शरीर की क्षणभंगुरता और निस्सारता का बोध कराया। मल्ली भगवती का उद्बोधन सुन सभी को उनके वचनों पर श्रद्धा हो गई और सभी अध्यात्म-मार्ग पर अग्रसर होने के भाव व्यक्त करने लगे। मल्ली भगवती ने तपपूर्वक सावद्य कर्मों की निर्जरा कर दीक्षा ग्रहण की। आपके साथ तीन सौ स्त्रियाँ और तीन सौ राजकुमार दीक्षित हुए। मल्ली भगवती जिस दिन दीक्षित हुईं उसी दिन अशोक वृक्ष के नीचे पृथ्वी शिला पट्ट पर सुखासन से ध्यान स्थित हो गईं। अपने शुद्ध भावों में रमण करते हुए उसी दिन केवलज्ञान की उपलब्धि कर ली।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारी उच्चकोटि की शिक्षिका और उपदेशिका रही है। उसके उपदेशों में हृदय की मधुरिमा के साथ मार्मिकता भी छिपी रहती है। तपस्या में लीन बाहुबली के अभिमान को चूर करने वाली उनकी बहनें भगवान ऋषभदेव की दो पुत्रियाँ—ब्राह्मी और सुन्दरी ही थीं। उनकी देशना में अहंकार एवं अभिमान में मदोन्मत्त बने मानव को निरहंकारी बनने की प्रेरणा थी। उनका स्वर था—

वीरा म्हारा ! गज थकी नीचे उतरो,
गज चढ्या केवली न होसी रे।

बहनों के वचन सुन बाहुबली बाहर से भीतर की ओर मुड़े। घोर तपस्वी बाहुबली की अन्तश्चेतना स्फुटित हुई, अहंकार चूर-चूर हो गया। लघु बन्धुओं को वन्दना के लिए उनके चरण भूमि से उठे। बस तभी केवली बाहुबली की जय से दिग-दिगन्त गूँज उठा।

शिक्षा जगत् में ब्राह्मी और सुन्दरी का नाम स्वर्ण-कलश की भाँति जाज्वल्यमान है। 'ब्राह्मी लिपि' ब्राह्मी की अलौकिक प्रतिभा का परिचायक है तो अंकविद्या का आदिस्रोत सुन्दरी द्वारा प्रवाहित किया गया।

श्रमण संस्कृति ने नारी जाति के आध्यात्मिक उत्कर्ष को ही महत्व दिया हो ऐसी बात नहीं है। किन्तु उसके साहस, उदारता एवं बलिदान को भी महत्व दिया है। राजीमती, मृगावती, धारिणी, चेलणा आदि नारियों की ऐसी परम्परा मिलती है जो अपने आदर्शों की रक्षा के लिए नारी-सुलभ सुकुमारता को छोड़कर कठोर साहस, बौद्धिक कौशल एवं आत्मउत्सर्ग के मार्ग पर चल पड़ीं। राजीमती से विवाह करने के लिए बरात सजाकर आने वाले नेमिनाथ जब बाड़े में बंधे पशुओं का करुण-क्रन्दन सुनकर मुंह मोड़ लेते हैं, दूल्हे का वेश त्यागकर साधु वेश पहनकर गिरनार की ओर चल पड़ते हैं, तब परिणयोत्सुक राजुल विरह-विदग्ध होकर विभ्रान्त नहीं बनती, प्रत्युत विवेकपूर्वक अपना गन्तव्य निश्चित कर संयममार्ग पर अग्रसर हो जाती है। जब नेमिनाथ के छोटे भाई मुनि रथनेमि उस पर आसक्त होकर संयमपथ से विचलित होते हैं तो वह सती साध्वी राजीमती उन्हें उद्बोधन देकर पुनः चारित्रधर्म में स्थिर करती हैं। महासती धारिणी आर्या चन्दनबाला की माता थीं। जिन्होंने अपने शील धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। धन्य है वह माँ ! सचमुच नारी अबला नहीं, सबला है। मृगी-सी भोली नहीं, सिंहनी-सी प्रचंड भी है।

आर्या चन्दनबाला की कहानी भारतीय नारी की कष्टसहिष्णुता, परदुःखकातरता, समभाव, शासन कौशल की कहानी है। राजसी वैभव में जन्मी, पली-पुसी राजकुमारी एक दिन रथी द्वारा गुलामों के बाजार में वेश्या के हाथों बेची गई। माँ की तरह ही 'प्राण जाय पर शील न जाय' की दृढ़प्रतिज्ञ चन्दना जब वेश्या के इरादे को पूरा न कर सकी तो एक सदाचारी सेठ को बेची गई। पितृछाया में भी दासी की तरह यंत्रणा। ईर्ष्यालु सेठानी ने उसके लम्बे-लम्बे बाल कैंची से काट दिये। हाथों में हथकड़ियाँ, पैरों में बेडियाँ पहनाकर भूमिगृह में डाल दिया घोर अपराधी की तरह। तीन दिन की भूखी-प्यासी बाला को खाने के लिए दिये गये उड़द के बाकले।

संकटों और यंत्रणाओं की इस घड़ी में चन्दना के धैर्य एवं साहस का प्रकाश क्षीण नहीं हुआ। उसकी शान्ति एवं समता का सरोवर नहीं सूखा। वह अपने हृदय में निरन्तर एक दिव्य-भावना संजोए अज्ञानग्रस्त आत्माओं के मंगल-कल्याण की कामना करती रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु महावीर ने चन्दना के अन्तस् को पहचाना। आध्यात्मिक पथ पर बढ़ने वाली नारी का उन्मुक्त हृदय से स्वागत किया। उन्होंने चन्दना को उसका खोया हुआ सम्मान दिया। चन्दना प्रभु के चरणों में आई। युगों की जड़ मान्यताओं को चुनौती देकर उसे श्रमणी रूप में दीक्षित किया। उसे अपनी प्रथम शिष्या बनाया और श्रमणी संघ के नेतृत्व की बागडोर सौंपी। चन्दनबाला ने ३६ हजार श्रमणियों एवं ३ लाख से अधिक श्राविकाओं का नेतृत्व कर इस बात को प्रमाणित किया कि नारी में नेतृत्व क्षमता पुरुष से किसी प्रकार कम नहीं है। चन्दनबाला के साध्वीसंघ में पुष्पचूला, सुनन्दा, रेवती, सुलसा, मृगावती आदि प्रमुख अनेक साध्वियाँ थीं।

तत्त्वज्ञ श्राविका के रूप में जयन्ती का नाम बड़े गौरव से लिया जाता है। उसकी तर्क शैली बड़ी सूक्ष्म और संतुलित थी। वह अनेक बार भगवान महावीर की धर्मसभाओं में प्रश्नोत्तर किया करती थी। ज्ञान के साथ विनय उसका आदर्श था। प्रभु की वाणी पर उसे अपार श्रद्धा थी। उसका मन विरक्त था। उसने भगवान महावीर का शिष्यत्व स्वीकार किया और आर्या चन्दनबाला के पास प्रव्रजित हुई।

कुछ लोगों ने नारी को विष की बेलड़ी, कलह की जड़ कहकर उसकी उपेक्षा की है। उन्होंने नारी के उज्ज्वल रूप को नहीं देखा। वह युद्ध की ज्वाला नहीं, शान्ति की अमृत वर्षा है। वह अन्धकार में प्रकाश किरण है। उसने अपने बुद्धि चातुर्य और आत्मविश्वास से मानव जाति को शान्ति से जीने की कला सिखाई।

वैशाली गणराज्य चेटक की पुत्री एवं वत्सराज शतानीक की पट्टमहिषी मृगावती भी अपने रूप लावण्य में अद्वितीय थी। उसके रूप पर उज्जयिनीपति चंडप्रद्योत मुग्ध था। मृगावती ने अपनी आध्यात्मिक प्रेरणा से चण्डप्रद्योत को चारित्रधर्म में स्थिर किया। तथा प्रभु महावीर की देशना सुनकर उन्हें वन्दन नमस्कार कर आर्या चन्दनबाला के पास दीक्षा अंगीकार की। एक दिन भगवान की सेवा में साध्वी मृगावती कुछ सतियों के साथ गई हुई थीं। वहाँ से लौटकर पौषधशाला में चन्दनबाला के पास आने में उन्हें सूर्यादि देवों के प्रकाश के भ्रम के कारण विलम्ब हो गया। रात्रि का अन्धकार बढ़ गया था। इस प्रकार विलम्ब से मृगावती को आते देख चन्दनबाला ने मृगावती से कहा—महाभागे! तुम कुलीन, विनयशील और आज्ञाकारिणी होते हुए भी इतनी देर तक कहाँ रहीं?

गुरुवर्या के उपालंभपूर्ण वचन सुन मृगावती का हृदय पश्चात्ताप की ज्वाला से तिलमिला उठा। वे चन्दनबाला के चरणों में गिर पड़ीं और अपने अपराध के लिये क्षमा माँगते हुए आत्माभिमुख हो गई। आत्मचिन्तन करते-करते सती जी को कुछ ही क्षणों में केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। आर्या चन्दनबाला को जब वास्तविक स्थिति का पता चला तो उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ। वे सोचने लगीं कि मैंने आज उपालम्भ देकर केवलज्ञानी मृगावती की आशातना की है। वे उनसे खमाने लगीं और आत्मालोचन करते-करते स्वयं केवलज्ञान को प्राप्त हो गईं। इस प्रकार क्षमा लेने वाली और क्षमा देने वाली दोनों ही आत्म-निरीक्षण करते-करते अपनी कर्म निर्जरा कर केवली बन गईं।

सीता, द्रौपदी, दमयन्ती, अंजना आदि सतियों का जीवन चरित्र आर्य संस्कृति की एक महान थाती है। इन नारियों ने सद्गुणों के ऊर्ध्वमुखी विकास में, चारित्रिक श्रेष्ठता में, सेवा, साधना, संयम एवं सहिष्णुता में जो आदर्श उपस्थित किया है, वह संसार में देव-दुर्लभ सिद्धि है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अबला कही जाने वाली नारी में जो शील, संयम और शक्ति का विकास हुआ है, उसके मूल में ध्यान साधना से फलित एकाग्रता, जागरूकता और मानसिक पवित्रता का विशेष योगदान रहा है।

उपर्युक्त ध्यान साधिकाओं का जीवन हमारे वर्तमान जीवन के लिये विशेष प्रेरणादायक है। आज स्त्री-शिक्षा के क्षेत्र में पहले की अपेक्षा काफी प्रगति हुई है। पर इस बहिर्मुखी ज्ञान से जीवन में इन्द्रिय भोगों के प्रति विशेष आकर्षण और पारिवारिक जीवन में इर्ष्या-द्वेष-कलह, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायिक वृतियों से उत्पन्न तनाव अधिक बढ़ा है। मन अधिक चंचल और अशांत बना है। फैशन-परस्ती, दिखावा और धार्मिक आडम्बरों में भी विशेष वृद्धि हुई है। इसका मुख्य कारण ध्यान-साधना की कमी है।

तप के नाम पर भी लम्बे समय तक भूखे रहने पर अधिक बल दिया जाता है। भूखे रहने से इन्द्रियों की उत्तेजना कम होती है, शरीर के प्रति ममत्व भाव में कमी आती है पर इस लाभ का उपयोग अन्तर्मुखी बनकर कषायों को उपशांत करने, किये हुए पापों का सच्चे हृदय से प्रायश्चित्त कर उन्हें पुनः न करने, दीन-दुःखियों की सेवा करने तथा सत्-साहित्य के अध्ययन-मनन और चिन्तन में नहीं किया जाता। इसका परिणाम यह होता है कि तप ताप बनकर रह जाता है। उससे आत्मा को विशेष शक्ति और प्रकाश नहीं मिल पाता। आवश्यकता इस बात की है कि तप के साथ ध्यान साधना को विशेष रूप से जोड़ा जाय तभी व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय तनावों से मुक्त हुआ जा सकता है और सच्चे अर्थों में वास्तविक शांति का अनुभव किया जा सकता है।

O O

नारी रूप नदी

सिंगार तरंगाए, विलासवेलाइ जुव्वणजलाए।
के के जयम्मि पुरिसा, नारी नइए न बुड्डन्ति ॥

—इन्द्रिय पराजयशतक ३६

शृंगार रूप तरंगों वाली, विलासरूप प्रवाह वाली और यौवन रूप जल वाली नारी रूपी नदी में इस संसार में कौन पुरुष नहीं डूबता ?

—: ❀ :—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org